परमाणु ऊर्जा केन्द्रीय विद्यालय, नरौरा (बुलन्दशहर)

हिन्दी–12

पुस्तक– आरोह भाग–2

पाठ– श्रम–विभाजन और जाति प्रथा, मेरी कल्पना का आदर्श समाज

मॉड्यूल–1/1

बाबा साहेब भीमराव आंबेडकर

जीवन परिचय–मानव–मुक्ति के पुरोधा बाबा साहब भीमराव आंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 ई. को मध्य प्रदेश के महू नामक स्थान पर हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीराम जी तथा माता का नाम भीमाबाई था। 1907 ई. में हाईस्कूल की परीक्षा पास करने के बाद इनका विवाह रमाबाई के साथ हुआ। प्राथमिक शिक्षा के बाद बड़ौदा नरेश के प्रोत्साहन पर उच्चतर शिक्षा के लिए न्यूयार्क और फिर वहाँ से लंदन गए। इन्होंने कोलंबिया विश्वविद्यालय से पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 1923 ई. में इन्होंने बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना की। ये संविधान की प्रारूप समिति के सदस्य थे। दिसंबर, 1956 ई. में दिल्ली में इनका देहावसान हो गया।

रचनाएँ– बाबा साहब आंबेडकर बहुमुखी प्रतिभा से संपन्न व्यक्ति थे। हिंदी में इनका संपूर्ण साहित्य भारत सरकार के कल्याण मंत्रालय ने 'बाबा साहब आंबेडकर संपूर्ण वाङ्मय' के नाम से 21 खंडों में प्रकाशित किया है। इनकी रचनाएँ निम्नलिखित हैं– द कास्ट्स इन इंडिया, जेनेसिस एंड डेवलपमेंट (1917), एनीहिलेशन ऑ.फ कास्ट (1936), मूक नायक, जनता, बहिष्कृत भारत।

श्रम–विभाजन और जाति–प्रथा

यह पाठ आंबेडकर के विख्यात भाषण 'एनीहिलेशन ऑ.फ कास्ट' (1936) पर आधारित है। इसका अनुवाद ललई सिंह यादव ने 'जाति–पाँति तोड़क मंडल' (लाहौर) के वार्षिक सम्मेलन (1936) के अध्यक्षीय भाषण के रूप में तैयार किया गया था, परंतु इसकी क्रांतिकारी दृष्टि से आयोजकों की पूर्ण सहमति न बन सकने के कारण सम्मेलन स्थगित हो गया। सारांश–लेखक कहता है कि आज के युग में भी जातिवाद के पोषकों की कमी नहीं है। समर्थक कहते हैं कि आधुनिक सभ्य समाज कार्यकुशलता के लिए श्रम–विभाजन को आवश्यक मानता है। इसमें आपत्ति यह है कि जाति–प्रथा श्रम–विभाजन के साथ–साथ श्रमिक विभाजन का रूप लिए हुए है।

श्रम–विभाजन सभ्य समाज की आवश्यकता हो सकती है, परंतु यह श्रमिकों का विभिन्न वर्गों में अस्वाभाविक विभाजन नहीं करती। भारत की जाति–प्रथा श्रमिकों के अस्वाभाविक विभाजन के साथ–साथ विभाजित विभिन्न वर्गों को एक–दूसरे की अपेक्षा ऊँच–नीच भी करार देती है। जाति–प्रथा को यदि श्रम–विभाजन मान लिया जाए तो यह भी मानव की रूचि पर आधारित नहीं है। सक्षम समाज को चाहिए कि वह लोगों को अपनी रूचि का पेशा करने के लिए सक्षम बनाए। जाति–प्रथा में यह दोष है कि इसमें मनुष्य का पेशा उसके प्रशिक्षण या उसकी निजी क्षमता के आधार पर न करके उसके माता–पिता के सामाजिक स्तर से किया जाता है। यह मनुष्य को जीवन–भर के लिए एक पेशे में बाँध देती है। ऐसी दशा में उद्योग–धंधों की प्रक्रिया व तकनीक में परिवर्तन से भूखों मरने की नौबत आ जाती है। हिंदू धर्म में पेशा बदलने की अनुमति न होने के कारण कई बार बेरोजगारी की समस्या उभर आती है। जाति–प्रथा का श्रम–विभाजन मनुष्य की स्वेच्छा पर निर्भर नहीं रहता। इसमें व्यक्तिगत रूचि व भावना का कोई स्थान नहीं होता। पूर्व लेख ही इसका आधार है। ऐसी स्थिति में लोग काम में अरूचि दिखाते हैं। अतः आर्थिक पहलू से भी जाति–प्रथा हानिकारक है क्योंकि यह मनुष्य की स्वाभाविक प्रेरणा, रूचि व आत्म– शक्ति को दबाकर उन्हें स्वाभाविक नियमों में जकड़कर निष्क्रिय बना देती है।

द्वारा–

नवीन कुमार भारंगर

स्नातकोत्तर शिक्षक, हिन्दी

परमाणु ऊर्जा केन्द्रीय विद्यालय, नरौरा (बुलन्दशहर)